

भगवान् के दर्शन

भगवान् अपने भक्तों को कभी नहीं छोड़ते । विशेष करके जब वह व्याकुल होता है, छटपटाता है, पुकारता है तब तो कहीं-न-कहीं आप-पास ही किसी-न-किसी रूप में छिपकर या प्रगट होकर अपने भक्त के भावोदय, भावसन्धि, भावनाबल्य, भावशान्ति और शरीर पर प्रकट होने वाले अनुभवों को देखदेख कर क्षण-क्षण में उस पर अपने आपको न्योछावर करते रहते हैं । इस काम में वे कभी-कभी इतने मग्न हो जाते हैं और अपनी ओर से असावधान हो जाते हैं कि इस बात की भी परवाह नहीं रखते कि कहीं मुझे और भी तो कोई नहीं देख रहा है । यह भी कह सकते हैं कि वे जब अपने को न्योछावर करते हैं । तब जैसे न्योछावर की हुई वस्तु किसी सेवक को दी जाती है वैसे ही अपने भक्त के सेवक के प्रति अपने को दे देते हैं । वे भक्त का प्रेम देखकर मानों अपने को बहुत छोटा समझने लगते हैं । भक्त को देने योग्य अपने आपको न समझकरके उसके सेवक को ही दे डालते हैं ।

एक दिन की बात है । वह नित्य को सेवक जब भोजन का थाल लेकर खिलाने को गया तब उसे एक अलौकिक झाँकी दिखाई पड़ी । भक्तकोकिलजी तो विरह अवस्था के आवेश में मग्न हैं । आँसुओं की वर्षा हो रही है और छः सात वर्ष के अवस्था की श्रीजनकनन्दिनी अपने नन्हें-नन्हें करकमलों

में अपनी साड़ी के आंचल का छोर लेकर उनके आँसू पोछ रही हैं । कभी गोद में बैठकर धैर्य बँधाती हैं, कभी पीठ की ओर से कण्ठ में बाहें डालकर प्यार भरे लाड़ से मना रहीं हैं । यह दृश्य देखकर वह प्रेमी सेवक आश्चर्यचकित हो गया और आनन्द में विभोर होकर अपने एक साथी को बुला लाया और इस मनोहर दृश्य के दर्शन का सौभाग्य उसे भी प्राप्त हुआ ।

भगवान् किसको दर्शन देते हैं ? जिसके मन में कभी भगवन्दर्शन की इच्छा ही नहीं हुई या होकर किसी कारण से मिट गयी उनको दर्शन देने की कोई आवश्यकता नहीं है । जिनके मन में इच्छा है और अपने रास्ते पर ठीक-ठीक चल रहे हैं उनकी ओर से भगवान् को कोई चिन्ता नहीं रहती, क्यों कि वे तो दौड़ते ठिठकते कभी-न-कभी भगवान् के पास पहुँच ही जायेंगे । भगवान् का सिंहासन तो तब हिलता है जब वे देखते हैं कि इच्छा, एवं अभिलाषा व्याकुलता के रूप में परिणित होकर तन्मयता का रूप धारण कर चुकी है और वह भी ऐसी जिसको आगे बढ़ने या और गाढ़ होने के लिये कोई दूसरा मार्ग या स्थान नहीं रह गया है । ऐसी अवस्था में हृदय में व्याकुलता और उद्वेग तो पराकाष्ठा पर पहुँच जाते हैं; परन्तु उनके सफल करने के लिये भक्त के पास कोई साधन या युक्ति नहीं रहती है । जैसे पंखहीन पक्षि शावक, भूखा प्यासा अपने माँ के लिये तड़फड़ा तो रहा है किन्तु उड़कर उसके पास नहीं जा पाता, तड़फड़ा करे अचेत हो गिर पड़ता है । ऐसी ही अवस्था भक्त की

होती है । उस समय भगवान् का हृदय उनके पास नहीं रहता । वह पानी-पानी होकर बह जाता है और अचेत भक्त के हृदय के साथ घुलमिल कर एक हो जाता है । इसी को तदाकारिता कहते हैं ।

भगवान् को जब अपने कलेजे में अपना दिल नहीं मिलता है तबवे उसे ढूँढ़ते हुए भक्त के पास आते हैं और उसको अचेत से सचेत करते हैं तथा भीतर से बाहर निकल कर दर्शन देते हैं । असल बात यह है कि भक्त अपने को साधन हीन देखकर जब अपनी विवशता से तड़फड़ाने लगता है तब कहीं इसके हृदय की धड़कन बन्द न हो जाय यह सोच कर भगवान् अपनी नकाब उतार देते हैं ।

श्रीजनकनन्दिनी के उद्योग से भी भक्तकोकिलजी की तन्मय व्याकुलता भंग नहीं हुई । वे गोद में बैठीं, कन्धे पर चढ़ीं, ठुड्डी छुईं, सिरपर हाथ फेरा और बोलीं कि “मैं तो तुम्हारे पास हूँ, प्रसन्न हूँ, सुखी हूँ ।” परन्तु वह थी भक्त कोकिलजी की एक तन्मयता जो टूटने का नाम ही नहीं लेती थी । कोई उपाय न देखकर अन्त में श्रीकिशोरी जी ने महाराज श्रीरामचन्द्र के साथ उनके हृदय में प्रवेश किया । सारा हृदय प्रकाश से जगमगा उठा, दिव्य सुगन्ध छा गयी और भक्त कोकिल ने अपने हृदय में अनुभव किया— दिव्य कल्पवृक्ष के नीचे रत्नमण्डप में मणिमय वेदिका पर कोटि-कोटि सूर्य और चन्द्रमा से भी विलक्षण परम ज्योतिर्मय श्रीयुगल सरकार

विराजमान हैं । उन्हे एक एक अंग से प्रेम और आनन्द की दिव्य रश्मियाँ निकल-निकल कर अपनी विशेषता से ब्रह्मानन्द को भी तिरस्कृत कर रही हैं ।

भक्तकोकिलजी यह अद्भुत झाँकी देखकर आश्चर्य में डूब ही रहे थे कि श्रीयुगल ने मेघ गम्भीर अमृतमयी वाणी से कहा - “पुत्री कोकिले ! हम दोनों सर्वदा एक हैं, मिले हुए ही हैं । वियोग की लीला तो केवल बाह्य और प्रजारंजन का आदर्श मात्र दिखाने के लिये है । तुम इस प्रकार व्याकुल मत होओ ।”

भक्तकोकिलजी अपने दानों कानों के दोनों से यह अमृत पान कर ही रहे थे कि वह दिव्य झाँकी आँखों से ओझल हो गयी और उन्होंने हड़बड़ा कर अपनी आँखें खोल ली । परन्तु यह क्या आश्चर्य ? वही दृश्य जो हृदय में अनुभव हो रहा था, आँखों के सामने बाहर भी है । तब क्या यह कोई स्वप्न है, कोई चित्त का भ्रम है, जादू का खेल है ? नहीं, नहीं ? यह तो स्वयं भगवान् है । हमारे हृदयेश्वर युगल सरकार ही हैं । शरीर स्तब्ध हो गया । पाँव चल न सके । हाथ हिल न सके । सिर झुका नहीं, नेत्र निर्निमेष देखते रह गये । युगलसरकार ने मुस्कराकर देखा तब कहीं मन सगबगाया, प्राण हिले, पलकें गिरीं और सिर युगल सरकार के चरणों में पड़ गया । युगल-सरकार ने उठाकर हृदय से लगाने पर सावधान करने पर चेतना ठीक-ठीक अपना काम करने लगी और भक्तकोकिलजी

गीली आँख, पुलकित शरीर, जुड़े हाथ, गद्गद् कण्ठ एवं आनन्दित हृदय से बोल पड़े - “ जय हो ! जय हो ! युगलसरकार की जय हो !!!”

“करुणावरुणालय पिता, आपकी जय हो ! आपकी जय हो !! आप वर्षा कालीन मेघ के सदृश अपने विज्ञानानन्द धन श्रीविग्रह की दिव्य अनुरागमयी रश्मियों से सम्पूर्ण जगत् को सुख-शान्ति तृप्ति का वितरण कर रहे हैं । आपकी शक्ति ज्ञान और आन्नद अनन्त है । हे कमलानयन ! मैं सब ओर से सर्वभाव से सहस्रों बार आपको नमस्कार करती हूँ । मेरा मन संसार सुख और ब्रह्मसुख से अत्यन्त व्यथित हो गया है । आप दोनों के विछोह के दर्शन से मैं अत्यन्त भयभीत हो गयी हूँ । हे युगल हृदय के हृदयेश्वर युगल ! आप दोनों कभी अलग-अलग नहीं हों । मैं आपके चरणों में बार-बार अनन्त प्रणाम करती हूँ । मेरे सच्चे माता पिता ! आप प्रसन्न हों । प्रसीद ! प्रसीद !”

श्रीभगवान् ने कहा - “बच्ची कोकिले ! यदि कोई एक बार भी मेरी शरण में आकर कह दे कि मैं तुम्हारा हूँ तो मैं उसे सबसे सदा के लिये अभय कर देता हूँ, यह मेरा व्रत है । मेरी अटल प्रतिज्ञा है । तुम्हारे अनन्य भाव से मैं तुम पर प्रसन्न हूँ । मैं यज्ञ, दान, तप, धारणा, ध्यान, समाधि, वेदादि के स्वाध्याय एवं ज्ञान से दर्शन नहीं देता हूँ । तुम्हारे अविरल प्रेम और भक्ति से ही मैं प्रसन्न होकर प्रकट हुआ हूँ । इसलिए

प्रिय बेटी ! मुझे महादानी समझ कर वर माँग ले ।”

भक्त कोकिल ने नम्र और मधुर वाणी से कहा -“स्वामी ! आप याचकों को उनके मनोविलास से भी अधिक देने वाले परम दयालु पिता हैं । मैं आपकी आश्रिता हूँ और आप मुझपर प्रसन्न हैं । मैंने बालस्वभाव से आपके सम्बन्ध में असम्भव-असम्भव मनोरथ कर रखे हैं, न कहने पर भी आप जानते हैं इसलिये मैं पूर्णकाम हूँ । आप अपनी परम प्रिय पुत्री को वर देना चाहते हैं । सतीगुरु परमहंस श्रीपार्थिविचन्द्र के पाद पद्म ही मेरे सर्वस्व हैं, प्राण हैं, दूलह हैं, मैं केवल उन्हीं का कुशल चाहती हूँ, यही मेरा सुख है, यही मेरी सिद्धि है । गरीबि श्रीखण्डि के इस वर को ही वात्सल्यपूर्ण हृदय से प्रतिपालन करना । मैं वह दृश्य देखना चाहती हूँ कि देव-कन्याएँ वीणा बजा रहीं हों स्वयं श्रीस्वामिनी वीणा-विनिन्दक स्वर से गान कर रही हों । प्रमोदवन में आप के संग श्रीस्वामिनीजी क्रीड़ा कर रही हों और मैं उनकी चरण-रज में लोट-पोट होती रहूँ ।”

युगलसरकार ने एक स्वर से कहा-‘एवमस्तु ! एवमस्तु !!
बेटी कोकिले ऐसा ही हो !!!